पेटेंट कानून में राष्ट्रीय हित की रक्षा ज़रूरी

भारत डोगरा

हाल के समय में ऐसे कई संकेत मिले हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका दबाव बना रहा है कि भारत अपने पेटेंट कानून में फिर कुछ बदलाव करे। दरअसल कई बहुराष्ट्रीय कंपनियां, विशेषकर दवा बनाने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियां चाहती हैं भारत के पेटेंट कानूनों में एक बार फिर बदलाव किए जाएं। इससे पहले विश्व व्यापार संगठन में प्रवेश के समय भारत ने अपने पेटेंट कानून को विश्व व्यापार संगठन के नियमों के अनुरूप बनाने के लिए बदला था।

हकीकत तो यह है कि वर्ष 1970 में भारत में जो पेटेंट कानून बना था वह हमारे राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए सबसे अनुकूल था। उसका एक मुख्य आधार यह था कि प्रोडक्ट या उत्पाद का पेटेंट नहीं मिलेगा, केवल प्रोसेस या किसी उत्पाद को बनाने के तरीके या प्रक्रिया का पेटेंट मिलेगा। इस तरह बहुराष्ट्रीय कंपनियों की बहुत महंगी दवाइयों को किसी अन्य प्रक्रिया से बनाने की संभावना खुली रखी गई थी, ताकि कम आय वाले ज़रूरतमंद मरीज़ किसी जीवन-रक्षक या अन्य महत्वपूर्ण दवा से वंचित न हों।

इससे न केवल भारत के कम आय वर्ग के मरीज़ों की बहुत सहायता हुई, अपितु इसकी बदौलत भारत में मज़बूत दवा उद्योग को पनपने का अवसर मिला। सस्ती दवा उपलब्ध करवाने वाली हमारी दवा कंपनियों की ख्याति दूर-दूर तक फैली। अनेक देशों ने भारत से सस्ती दवाओं का आयात कर अपने ज़रूरतमंद मरीज़ों को राहत पंहुचाई।

इसका एक विश्व स्तर पर चर्चित उदाहरण वर्ष 2001 में सामने आया था जब बहुराष्ट्रीय कंपनियां एच.आई.वी. एड्स की दवा 15,000 डॉलर प्रति वर्ष प्रति मरीज़ की ऊंची कीमत पर बेच रही थीं। इतनी ऊंची कीमत की वजह से अनेक देशों, विशेषकर अफ्रीका के देशों में अनेक मरीज़ ऐसी दर्दनाक मौत की ओर जा रहे थे जिससे बचना संभव था। इस संकट की स्थिति में भारतीय कंपनी सिप्ला के अध्यक्ष ने 15,000 डॉलर में बेची जा रही दवा को 350 डॉलर यानी बाज़ार दाम से 3 प्रतिशत से भी कम कीमत पर उपलब्ध कराने का प्रस्ताव दिया। इस तरह जो सस्ती दवा उपलब्ध हुई, उससे दुनिया भर के हज़ारों लोगों की जान बचाई जा सकी।

इस तरह के उदाहरणों के आधार पर यह कहा जाने लगा कि भारत विश्व के ज़रूरतमंद मरीज़ों की फार्मेसी बन सकता है। यह भारत के लिए गर्व की बात थी जिसे बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों ने कतई पसंद नहीं किया। उन्होंने विश्व व्यापार संगठन में प्रवेश के समय भारत पर पेटेंट कानून में ऐसे बदलाव लाने का पूरा दबाव बनाया जिससे उनकी महंगी दवाओं के सस्ते विकल्प भारत उपलब्ध न करवा सके।

इस दबाव के बावजूद भारत में स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने व साथ में स्थानीय दवा कंपनियों ने एक अभियान चलाया कि चाहे सरकार को पेटेंट कानून में संशोधन करना पड़े पर वह ज़रूरतमंद मरीज़ों के हितों के लिए व स्थानीय उत्पादन की रक्षा के लिए कुछ प्रावधान अवश्य रखे। इस तरह पेटेंट कानून में कुछ प्रावधान ऐसे रखे गए जिनकी बदौलत कुछ हद तक भारत के मरीज़ों व स्थानीय उत्पादन के हितों की रक्षा हो सकी। उदाहरण के लिए इस कानून में 3(डी) का चर्चित प्रावधान है जो नए आविष्कार को परिभाषित करता है। इससे बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा मनमाने ढंग से पेटेंट प्राप्त कर अधिक कीमत वसूलने पर रोक लगती है।

इस तरह हम कुछ हद तक अपने दवा क्षेत्र को अधिक आक्रामक पेटेंट व्यवस्था से बचा सके। परंतु जैसी सहूलियत वर्ष 1970 के कानून से मिली थी वह धीरे-धीरे छिनने लगी। सिप्ला कंपनी के एक उच्च अधिकारी ने कहा कि जिस तरह उनकी कंपनी पहले सस्ती दवा निर्यात कर बहुत से जीवन बचा सकी थी, अब उसकी संभावना कम होती जा रही है।

और तो और, अब तो ऐसी स्थिति भी देखी जा रही है कि अनेक महंगी दवाओं के जो सस्ते व जेनेरिक संस्करण पहले बाज़ार में उपलब्ध थे उन्हें हटाया जा रहा है। कुछ

महत्वपूर्ण दवाइयों को बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारतीय बाज़ार में ला ही नहीं रही हैं। इस तरह भारत पर दबाव बनाया जा रहा है कि वह पेटेंट कानून में अब और बदलाव करे जो बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हितों के अनुकूल हों।

इतना ही नहीं, संयुक्त राज्य अमेरिका व युरोप के कुछ देशों द्वारा भी भारत पर पेटेंट कानून में बदलाव करने का दबाव बनाया जा रहा है। हाल ही में देश के कई जाने-माने विशेषज्ञों ने बयान जारी किया है कि सरकार को ऐसे दबावों के आगे झुकना नहीं चाहिए।

एक बार पहले (वर्ष 2004 में) विश्व व्यापार संगठन से जुड़ी शर्तों के पालन के लिए भारत पहले ही अपने पेटेंट कानून में संशोधन कर चुका है। जिससे हमारा पेटेंट कानून ट्रिप्स (व्यापार सम्बंधी बौद्धिक संपत्ति अधिकार) के समझौते के अनुकूल हो गया है। यह अलग बात है कि उस समय भी भारत पर पेटेंट कानून में बदलाव के लिए जो दबाव बनाया गया था वह उचित नहीं था। उससे हमारे दवा उद्योग व हमारी स्वास्थ्य व्यवस्था की काफी क्षति हुई है। अब इसके आगे और संशोधन के लिए कहना तो बहुत अन्यायपूर्ण है। अमेरिका को पता है कि विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से अब यह दबाव नहीं बनाया जा सकता है क्योंकि उसकी शर्तों के अनुकूल बदलाव भारत बहुत पहले कर चुका है। अतः अब यह दबाव द्विपक्षीय स्तर पर बनाए जा रहे हैं।

हाल में भारत सरकार ने जिस तरह पेटेंट परामर्शदाताओं का चुनाव किया था, जिस तरह दवाइयों की कीमतों को नियंत्रित करने वाली कार्रवाई को बीच में रोक दिया था, उससे सही संकेत नहीं मिल रहे हैं। आज ज़रूरत इस बात की है कि उचित कीमत पर दवाएं उपलब्ध करवाने के लिए सरकार पेटेंट कानून पर बाहरी दबाव का प्रतिरोध करे और राष्ट्रीय हितों की रक्षा करे।

पिछले एक दशक के इतिहास से तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे सरकार किफायती दवाओं के उत्पादन व उपलब्धता के लक्ष्य से दूर हट रही है। चूंकि इस मामले में भारतीय दवा उद्योग का विश्व स्तर पर महत्वपूर्ण स्थान है, अतः इन प्रवृत्तियों के दुष्परिणाम केवल हमारे देश में ही नहीं अपितु विश्व स्तर पर भुगतने पड़ेंगे। करोड़ों मरीज़ों को सस्ती दवाएं मिलना पहले से अधिक कठिन होगा। ज़रूरतमंदों की फार्मेसी के रूप में हमारे देश के दवा उद्योग को जो प्रतिष्ठा मिली है, वह प्रभावित होगी। यदि सरकार चाहे तो इस समय भी स्थिति संभाल सकती है ताकि भारत की प्रतिष्ठा विश्व के ज़रूरतमंद लोगों की फार्मेसी के रूप में बनी रहे या पहले से भी अधिक मज़बूत हो। ***(स्रोत फीचर्स)***